International Journal of Scientific Research in Engineering and Management (IJSREM)
Volume: 09 Issue: 06 | June - 2025 SJIF Rating: 8.586 ISSN: 2582-3930

सुआ गीत : एक मौन् परंपरा की मुखर क्रांति

Shiva Ghritlahare

सारांश :- छत्तीसगढ़ सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध प्रदेश है। वर्ष के बारह महिनों तक कोई- न -कोई तीज् त्योहार मनाए जाते है। इसका संबंध देवी ,देवताओं व प्रकृति की पूजा से होता है , ताकि लोगों के जीवन में सुख-शांति बनी रहे ।

ऐसे ही मौलिक सुख की प्राप्ति यदि समूह में हो तो अत्यन्त सुखदायी होती है। "सर्वहिताय सर्व् सुखाय" कि भावना व्यक्त होती है। हमारे छत्तीसगढ़ के लोकगीतों की विशेष बात यह है की यहां पर ज्यादातर लोकगीत एकल ना होकर सामूहिक रूप से होते हैं। इसमे एक गायक दल के साथ वादक् दल या सामूहिक दल का विशेष योगदान होता है।
छत्तीसगढ़ की लोकगीतों में न केवल भावनावो की अभिव्यक्ति होती है, बल्कि समाज की सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक चेतना को भी दर्शाते हैं ।
छत्तीसगढ़ की लोकगीतों में सुआ गीत इसी तरह का सामूहिक लोक नृत्य- गीत है। सुआ गीत को न केवल लोकगीत कहना चाहिए बल्कि इसे नोक -नृत्य गीत कहना ज्यादा अच्छा होगा । क्योंकि इस लोक गीत में गीत के साथ-साथ सामूहिक नृत्य का भी समावेश होता है। सुआ गीत को हमेशा सामूहिक में ही गाया जाता है। जिसमें कम से कम तीन और् अधिक् से अधिक् बीस-पच्चीस महिलाएं होती है। इस गीत में लड़कीयाँ, व स्त्रियो की मनोभावना व्यक्त होती है।

इस गीत में नाचना -गाना दोनों काम साथ में होता है इसमें अलग से वादक समूह की आवश्यकता नहीं होती है ,इसलिए 'सुआ'लोकगीत को " नृत्य गीत" कहा जाए तो कोई अति संयोक्ति नहीं होगी ।
सुआ गीत छत्तीसगढ़ की लोक परंपरा की अमूल्य धरोहर है यह गीत वहां की बालियो ,प्रतिको और विश्वासों को समेटे हुए हैं ,लोक साहित्य में इनका स्थान महत्वपूर्ण है क्योंकि यह ना केवल मनोरंजन का साधन है बल्कि संस्कृति के संरक्षण और संप्रेषण का माध्यम भी है ।

सुआ गीत महिलाओं की सामूहिक अभिव्यक्ति का माध्यम है जिसमें भी पारंपरिक वेशभूषा में सज् कर नृत्य करती हैं इस गीत में सुआ (तोता) को प्रतिक् रूप में प्रयुक्त किया जाता है जो ,संवाद संदेश और सौंदर्य का प्रतिनिधि बन जाता है ।
यह गीत स्त्रियों के छिपे भावों को ,उनकी आशाओं को ,आकांक्षाओं को ,पीड़ा को सांकेतिक रूप में व्यक्त करती है ,यह गीत महिलाओं की अभिव्यक्तियों को संवाद गीत या प्रेम के माध्यम से दर्शाती हैं ।
सुआ लोकगीत में महिलाएं मायके की याद, पति से संवाद ,सहेली से संवाद, प्रेम व पीड़ा को बड़ी ही सादगी पूर्ण तरीके से प्रस्तुत करती है।

कुटशब्द:- छत्तीसगढ़, लोकगीत, सांस्कृतिक्, चेतना ,पारंपरिक,लोक परंपरा ,सामाजिक ,लोक नृत्य ।

प्रस्तावना :-

"तरी, नरि ना, मोर ना ना, सुआ ना,
सुआ बोलत हे रे,

तरी, नरि ना, मोर ना ना , सुआ ना,
सुआ बोलत हे रे,

सुआ बोलत हे राम ले ले के तोर नाम, तोला हे परणाम सुआ बोलत् हे…
सुआ बोलत हे राम ले ले के तोर नाम, तोला हे परणाम सुआ बोलत् हे…"

छत्तीसगढ़ की धरा पर जब हरियाली लहलहाती है ,खेतों में धान की बालियां झूमती है ,और दीपावली के दिन गांव की गलियों में स्त्रियां सर पर सुआ ' मिट्टी की प्रतिमा' रखकर गोल घेरा बनाकर थिरक्ती है ,तब गूंजते हैं ऐसे ही मीठे भावपूर्ण और लोक जीवन से जुड़े गीत जिन्हें हम 'लोक् सुआ गीत' के नाम से जानते हैं ।

यह गीत केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं ,बल्कि ग्रामीण स्त्रियों की आत्मा की आवाज होती है ।

यह गीत उस लोक् चेतना की अभिव्यक्ति है जो पीढ़ी दर पीढ़ी परंपराओं ,विश्वासों और अनुभवों के रूप में स्त्रियों के मन् में पलती रहती है ।

सुआ छत्तीसगढ़ी में "तोते" को कहा जाता है ,यह छत्तीसगढ़ी जनमानस में केवल एक पक्षी नहीं ,बल्कि संवाद स्नेह , प्रतीक्षा और सौंदर्य का प्रतीक है । जब महिलाएं सुआ गीत गाती है और सर पर सुआ की मिट्टी की प्रतिमा रखकर नृत्य करती हैं ,तो वह केवल एक सांस्कृतिक अनुष्ठान भर नहीं होता वह एक जीवंत सामाजिक प्रक्रिया का हिस्सा होता है ।

जिसमें स्त्री के मन् की वह अनुभूतियां उभरती है जो सामान्यत: सामाजिक जीवन में दबा दी जाती है, सुआ गीतों में प्रेम, विरह अनुराग, परिवार, जीवन संघर्ष, और स्त्री चेतना की छटाएं दिखाई देती हैं ।

यही कारण है कि यह गीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि स्त्री पक्ष के आत्मबोध और अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन गया है ।

सुआ गीत मूलतः नारी प्रधान ग्राम्य् लोकगीत हैं यह् मुख्य रूप से गोंढ जनजाति की बालिकाओं द्वारा गाया जाता है, भले ही आज के समय में सभी जनजाति व समुदाय के लोग इस गीत को गाते है।

गोंडी महिलाओं द्वारा इस लोकगीत को बड़ी ही सादगी पूर्ण, बुद्धिमत्ता पूर्ण व सरल स्वभाव में संवाद के रूप में व्यक्त करती ।

सुआ लोकगीत मुख्यत: दीपावली के समय गाये जाते हैं, जब खेतों की फसल कट कर घर आती है और ग्रामीण जीवन उल्लास से भर उठता है ।

इस पर्व पर महिलाएं सामूहिक रूप से एकत्र होकर पारंपरिक वेशभूषा में सुआ माटी की प्रतिमा बनाकर जो की सुआ (तोते) के समान ही हरे रंग का होता है, उसको एक टोकरी (बांस का टुकना) में रखकर चावल या धान को डालकर, कलसा या जलते हुए

दीपक को रखकर, माता लक्ष्मी की फोटो को लिए हुए, गोल घेरा बनाकर स्त्रियां चारों तरफ घूम-घूम कर नाचती व गाती रहती है ।

इसमें एक और जहां खेती, पशुपालन व परिवार का महत्व होता है वहीं दूसरी ओर लोक विश्वास, देवी ,देवताओं की स्तुति और स्त्री के सामाजिक जीवन की विविध अवस्थाएं प्रकट होती है ।

इस लोकगीत में महिलाएं पारंपरिक वेशभूषा और श्रृंगार के माध्यम से भी लोक् सौंदर्य का जीवंत चित्रण प्रस्तुत करती है ।

इस लोकगीत में महिलाएं पारंपरिक छत्तीसगढ़ी परिधान धारण करती है, इन परिधानो में प्रमुख रूप से लुगरा या साड़ी (लुगरा) एक प्रकार से साड़ी ही होती है, जो विशेष छत्तीसगढ़ी शैली में पहनी जाती है ।

इसका पल्लू आमतौर पर गोलाकार ढंग से कंधे पर लपेटा जाता है,जिससे नृत्य करते समय गति और लय् में सौंदर्य की झलक देखने को मिलती है ।

इन साड़ियों (लुगरा) की रंग गाढ़ा हरा, नीला व पीला होता है जिन पर पारंपरिक कढ़ाई का कार्य होता है।

इन रंगों का चयन प्रकृति, त्यौहार व फसल की भव्यता से मेल खाता है जिससे इन महिलाओं की शोभा में चार चांद लगा जाते हैं ।

इस लोकगीत में छत्तीसगढ़ी आभूषणों का विशेष महत्व रहता है जो की महिलाओं द्वारा

“बिछिया” (पैरों की अंगुली में पहने जाने वाला)

चूड़ा और कड़ा, कांसा, कन् बाली ,झुमका (कानों में)

फूली, नथली (नाक में)

लरि, मांग टीका (माथे पर)

सुता, हनसुलि (गले पर) तथा करधनि, कमर बंद है (जो कमर पर विशेष रूप से पहने जाते हैं) ।

यह गहने ना केवल सौंदर्य वर्धक होते हैं बल्कि उनमें पारंपरिक और सांस्कृतिक भावनाएं निहित होती हैं अधिकांश गहने चांदी या पीतल के बने होते हैं जो ग्रामीण जीवन की सौंदर्य व सरलता को दर्शाते हैं ।

सज धज कर जब महिलाएं मिट्टी की प्रतिमा सुआ को सर पर रखकर गोल घेरा बनाकर नृत्य करती है, तो उनकी वेशभूषा आभूषण और श्रृंगार मिलकर एक अलौकिक दृश्य प्रस्तुत करती है ।

नृत्य की लय और शरीर की भंगिमा के साथ वस्त्रो की गति और गहनों की छनक, गीत के भावों को और भी प्रभावशाली बना देती है।

इन लोकगीतों में मुख्यत: स्त्री जीवन, प्रेम, विरह, पारिवारिक संबंध, सामाजिक व्यवस्थाएं, तथा देवी, देवताओं की स्थिति के भाव पाये जाते हैं। गीतों की शैली सहज लयात्मक तथा भावपूर्ण तुक में तुक् मिला हुआ होता है इसमें कभी प्रतिकात्मक रूप में कभी सीधे-सपाट भावों में लोग जीवन की विविध छवियां सामने आती हैं ।

सुआ गीतों के माध्यम से ग्रामीण स्त्रियां अपने लोक विश्वास परंपराओं और मनोभावों को कविता, संगीत और नृत्य की त्रिवेणी संगम के रूप में अभिव्यक्त करती हैं ।

इतिहास एवं महत्व :

"सुआ गावत तिरीया मन, धरती ला प्रणाम करव् ,
माटी के गंध् म भरे हवय्, संस्कृति के गान् करव्"

छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विरासत में सुआ गीत ऐसी लोकधारा है, जो स्त्री की सामूहिक चेतना सामाजिक संवाद और प्रकृति से सहजीवन का प्रतीक बन चुकी है । सुआ गीत का इतिहास लिखित पुस्तकों में कम कीवंदतियों, लोक कथाओं और मौखिक परंपराओं में अधिक सुरक्षित है ।
यह गीत मुख्यत: छत्तीसगढ़ ,मध्यप्रदेश व उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्रो में अधिक प्रचलित है ।
इस संपूर्ण लोकगीत का केंद्र बिंदु सुआ (तोता) होता है जो की वाद् संवाद तथा भावों के आदान-प्रदान का मुख्य जरिया होता है वह स्वयं एक प्रतीक है "सौंदर्य है वाणी है"।
ऐसा कहां जाता है कि सुआ गीत की उत्पत्ति स्त्री समाज के उस सांस्कृतिक अवकाश से मानी जाती है जो की पुरुष खेतों में कार्यरत थे और स्त्रियां एकत्र होकर सामूहिक गीत -संगीत के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति करती थी ।

यह लोकगीत प्रेम -बिरह सामाजिक व्यंग्य ,पारिवारिक स्थितिया,कृषि जीवन और पर्यावरणीय बोध हैं ।
इस लोकगीत में भले ही प्रतीक सुआ (तोता) हो मगर स्त्रियां अपना मौन स्वर् भरती है वह मौन् स्वर जो घर परिवार की सीमाओं में नहीं निकल पाता ।
यह गीत पितृ सत्तात्मक संरचना के भीतर स्त्री के सहजीवी शक्ति को उजागर करती है वह शक्ति जो गीतों के माध्यम से सवाल पूछ सकती हैं ,व्यंग कर सकती हैं और प्रेम के अधिकार की बात कर सकती है ।

सुआ लोकगीत जैसी लोक धाराएं लिखी नहीं जाती वे लोक मंथन से जन्मती है ,और पीढ़ी दर पीढ़ी मुख से मुखान्तर् होती जाती है।
सुआ गीत इसी मौखिक परंपरा की उपज है जो आज के समय में ग्राम्य् जीवन के सहज संवाद में ढलकर संस्कृति का जीवन्त् दस्तावेज बन जाता है ।
छत्तीसगढ़ में विभिन्न प्रकार की जनजातीया निवास करती हैं जो की अपनी सरल भाषा एवं सांस्कृतिक पहचान की परीचायक है, इसी जनजातीय मे गोंड जनजाति का अधिक महत्व है यह लोग अपनी सादगी पूर्ण जीवन के लिए पहचाने जाते हैं जो की प्रकृति के उपासक हैं ।

यही लोग हमारी लोकगीत सुआ को नई पहचान और नई आयाम दिए हैं जो आज के समय में परंपरा के रूप में त्यौहार के रूप में उभर कर सामने आया है ।
सुआ गीत मुख्यत: दीपावली (कार्तिक अमावस्या)के अवसर पर गाया जाता है लेकिन इसकी शुरुआत कुंवार (आश्विन) महीने की पूर्णिमा या दशहरे के बाद से ही हो जाती है , और यह सिलसिला दीपावली तक चलता रहता है ।
सुआ गीत अश्विन से कार्तिक महीने तक विशेष रूप से दीपावली के आसपास इसलिए गया जाता है क्योंकि यह समय फसल पकने,स्त्रियों की सामूहिकता, सांस्कृतिक उत्सव और आस्था का होता है ।

यह गीत लोक और प्रकृति के सह् जीवन की अद्‌वितीय अभिव्यक्ति हैं।

वैसे तो सुआ गीत को सुबह से शाम या रात्रि कालीन तक गया जा सकता है परंतु इस लोकगीत का आनंद संध्या के समय बड़ी ही रुचिकर होती है ।जब महिलाएं समूह में इस लोकगीत को अपनी आवाज के माध्यम से सबके सामने पिरोति है तो ऐसा लगता है मानो यह समय चलता रहे और बस चलता रहे ।

इसके बाद जिस भी घर में सुआ गीत चलता है महिलाएं गाती है तो घर वाले खुश होकर बड़ी कोमल भाव से चावल, धान् या पैसा देते हैं।

बदले में सामूहिक रूप से महिलाएं उसको आशीर्वाद देती हैं ताकि उनका घर धन-धान्य से भरपूर हो और ईश्वर की कृपा उन पर बनी रहे।

यह इस लोकगीत की सबसे खास बात होती है कि सब लोग अपनी-अपनी सुविधा अनुसार जिससे जितना और जो भी बन पड़े दान के रूप में देते हैं और बदले में बिना किसी भेदभाव के सामूहिक रूप से वे महिलाएं सबको आशीर्वाद देती है ताकि वर्ष भर आप और आपका परिवार खुश रहे ।

और इसी के साथ या कम चलता रहता है एक घर से दूसरे घर इस बस्ती से उस बस्ती अपनी सुरों व् लय् का परिचय देते हुए ।

साहित्यिक अध्ययन :-

भारतीय लोक साहित्य में सुआ गीत एक अद्‌वितीय स्थान रखता है विशेषत: छत्तीसगढ़, उड़ीसा, झारखंड तथा मध्य प्रदेश के कुछ अंचलों में यह गीत स्त्री की सामूहिक अभिव्यक्ति और सांस्कृतिक अस्मिता का जीवन्त् दस्तावेज है ।

अब तक सुआ गीत पर कई लोकाचार केंद्रित दृष्टिकोण सामने आए हैं किंतु यह अध्ययन सुआ गीत को केवल परंपरा नहीं अपितु स्त्री अंतरात्मा की सांस्कृतिक, प्रतिध्वनि, सामाजिक विमर्श और मानवीय चेतना को जोड़ने का प्रयास करता है ।

सुआ गीत को यदि एक अन् लिखा महाकाव्य कहा जाए तो यह अतिसंयोक्ति नहीं है ।

यह गीत ग्रामीण स्त्रियों द्‌वारा पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप में गाया जाता है जिसमें कोई भी लिखित ग्रंथ या औपचारिक प्रशिक्षण शामिल नहीं है फिर भी इसकी काव्यात्मक रचना, रस समन्वय और प्रतीक व्यंजना अद्‌वितीय है ।

यह एकमात्र ऐसा लोकगीत है जो स्त्री समूह द्‌वारा, रचा गाया और अभिनय किया जाता है ।

सुआ वैसे तो सामान्य दृष्टि से पक्षी है परंतु साहित्यिक दृष्टि से यह एक अत्यंत गूढ़ प्रतीक है, वह संदेश वाहक है, प्रेम दूत् है, कभी आत्मा का स्वरूप है, तो कभी पुरुष समाज से संवाद करने का माध्यम है ।

यदि हम आचार्य मम्मट के काव्य लक्षण "वाक्यर्थ्: रसात्मक:काव्यम्" को मानदंड माने तो सुआ गीत पूर्णता इस पर खरा उतरता है ।इसमें श्रृंगार, करुण, वीर और भक्ति रस की सरिता बहती है ।

शब्दों का चयन, ध्वनि की पुनरावृत्ति, लयात्मकता और प्रतिकों का प्रयोग इस गीत को ना केवल सौंदर्य की दृष्टि से समृद्‌ध बनाता है,बल्कि इसे एक रस प्रधान साहित्यिक कृति भी बनता है ।

यह वह काव्य है जो "गाया नहीं जाता जिया जाता है"।

इस गीत में स्त्री के भीतर पनपते उस मौन विद्रोह की झलक है जिसे ना तो कोई घोषणा पत्र चाहिए और ना ही आंदोलन ।
वह कहती है -

"तोर भैया ला बोलावा मोला बिहाव करावा"

यह केवल एक प्रेम इच्छा नहीं है बल्कि निर्णय लेने की चेतना है या वह वाणी है जो प्रेम को पवित्र अधिकार मानती हैं और विवाह को स्त्री की सहमति से जोड़ती है जो भारतीय सामाजिक व्यवस्था के लिए अब भी क्रांतिकारी हैं ।
सुआ गीत में ना केवल यथार्थ नहीं स्त्री के प्रेम की पुकार है, बल्कि आत्मा की शाश्वत खोज है एक ऐसी खोज जिसमें वह प्रकृति से ईश्वर से और स्वयं से संवाद करती हैं ।

सुआ गीत वह लोक साहित्य है जो ना पाठ्यक्रमों में है ना विश्वविद्यालय में परंतु उसकी काव्यात्मकता भाव धारा और विचार गहराई में आधुनिक साहित्य को पीछे छोड़ने का सामर्थ्य रखती है ।
यह गीत स्त्री की आत्मा से उपजा हुआ एक सांस्कृतिक वेद् है यदि आधुनिक कविता, नाटक, कथा इससे प्रेरणा ले तो संवेदना और सौंदर्य के नए प्रतिमान गढ़ सकते हैं ।

निष्कर्ष :-

लोकगीत सुआ एक सामाजिक और स्त्री विमर्श की समेकित पड़ताल रहा, जो अब तक के अध्यायों की संकल्पना से होकर एक विशिष्ट निष्कर्ष पर पहुंचता है ।
प्रस्तावना में हमने यह स्थापित किया कि सुआ गीत कोई साधारण लोक परंपरा नहीं बल्कि वह स्त्री की स्मृति संवेदना और सामाजिक सहभागिता का जीवन्त् दस्तावेज् है ।

यह गीत नारी की मौन होती भाषा को स्वर प्रधान करता है, और उसकी भूमिका को परंपरागत ढांचे में पुनर परिभाषित करता है ।
सुआ गीतों में प्रयुक्त प्रतीक जैसे तोता (सुआ) लकड़ी की टोकरी धान, चावल, खेत या पीपल वृक्ष ये केवल बाह्य् वस्तुएं नहीं बल्कि ग्रामीण स्त्री चेतना की आत्मगत भावनाओं और अनुभव के प्रतीक है।
सुआ वह पक्षी है जो उड़ नहीं सकता, जिसे टोकरी में कैद किया जाता है ।
यह छवि स्त्री जीवन की सीमाओं और उनकी सृजनशीलता की विडंबना को दर्शाती है ,लेकिन इसी टोकरी के भीतर वह स्त्री अपनी आवाज खोजती है ,नृत्य करती है, गीत रचती है, यही उसका प्रतिरोध है इसकी रचनात्मक पुनः प्राप्ति ।

वर्तमान समय में जबकि वैश्वीकरण और बाजारवाद ने लोक परंपराओं को या तो प्रदर्शन की वस्तु बना दिया है या उन्हें विस्मृति के हवाले कर दिया है सुआ गीत आज भी स्त्रियों की सामाजिक स्मृति में जीवित है ।
यह लोकगीत ना केवल सांस्कृतिक धरोहर हैं बल्कि एक वैकल्पिक इतिहास भी हैं, एक ऐसा इतिहास जिसे ना तो राज्यों की अभिलेख ने संजोया ना ही मुख्य धारा के विमर्शों ने स्थान दिया ।

यह गीत स्त्रियों की लोक नारी शास्त्र की अवधारणा को जन्म देता है जिसमें नारीवाद किसी आंदोलन या सैद्धांतिक प्रतिवाद के रूप में नहीं बल्कि सामूहिक गायन, नृत्य और आत्मीयता के माध्यम से अभिव्यक्त होता है । यह स्त्रियों का लोक संघर्ष है जहां वे ना तो प्रत्यक्ष विद्रोह करती हैं न हीं मौन् स्वीकार् करती हैं बल्कि संस्कृति के भीतर व्यवस्थापित करती है ।
अब तक के अधिकांश शोध सुआ गीत को लोक कला ,त्यौहार गीत या आदिवासी संस्कृति की सीमित परिधि में देखकर उसके व्यापक सामाजिक ,दार्शनिक पक्ष को अनदेखा करते हैं ।

यह शोध बताता है कि सुआ गीत "स्त्री की आत्मा का गीत है" उसकी भाषा उसकी राजनीति और उसकी आत्म परिकल्पना ।
अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सुआ गीत को केवल लोक संस्कृति की वस्तु मानना उसके गहरे अर्थ बोध् और सामाजिक चेतना की अवहेलना है ।
यह गीत स्त्रियों की स्मृति ,सामूहिकता और सांस्कृतिक प्रतिरोध की आवाज है -एक ऐसी आवाज जिसे यदि ध्यान पूर्वक सुना जाए तो उसमें स्त्री जीवन की समूची कविता और संघर्ष की कथा समाहित है।

यही वह निष्कर्ष है जो इस शोध को नवीन दिशा देता है 'सुआ गीत को "स्त्री आत्मा का सांस्कृतिक घोष" मानने की दृष्टि'।

संदर्भ :-

1. डॉ. जगदीश कुलदीप - "छत्तीसगढ़ के सुआ गीत साहित्यिक सांस्कृतिक अनुशीलन"।
2. रामकुमार वर्मा – "चौमासा छत्तीसगढ़ी सुआ गीत"।
3. अजय कुमार सरोज- " भारत के विभिन्न अंचलों के लोकगीत"।
4. आचार्य मम्मट - "काव्य लक्षण"
5. डॉ.रमाकांत सोनी - "सुआ गीत मे करुणा ,अध्यात्म ,हास्य ,श्रृंगार और शान्त रस के विविध रूपों का वर्णन"।
6. सहपिडिया -ऑनलाइन संसाधन- " भारतीय कला , संस्कृत व विरासत की जानकारी"।
7. ममता चंद्राकर - "सुआ गीत"।
8. प. अमृतलाल दुबे - "सुआ गीत की संगीतात्मकता और लयात्मकता"।
9. स्व. हरि ठाकुर - "सुआ गीतों की प्राचीनता"।
10. सुधा वर्मा - "आधुनिक समय में सुआ गीत"।
11. आरु साहू - "तरि नरि ना मोर ना- ना"।(सुआ गीत)